अनुवाद

निःसन्देह ये सभी भक्त उदार हैं; परन्तु जो मेरा तत्त्वज्ञानी है, उसे तो मैं अपने में ही स्थित मानता हूँ। मेरी भक्ति के नित्य परायण रह कर वह मुझे ही प्राप्त होता है।।१८।।

तात्पर्य

यह सत्य नहीं कि अपूर्ण ज्ञान वाले दूसरे भक्त श्रीभगवान् को प्रिय नहीं हैं। श्रीभगवान् कहते हैं कि ये सभी उदार हैं, क्योंकि किसी भी कारण से श्रीभगवान् की शरण में आने वाला 'महात्मा' है। भगवद्भक्ति से किसी प्राकृत लाभ के अभिलाषी भक्तों को भी श्रीभगवान् स्वीकार करते हैं, क्योंकि उनमें भी स्नेहभाव है। स्नेहवश ही वे श्रीभगवान् से किसी विषय-लाभ की कामना करते हैं। वास्तव में देखा जाता है कि इच्छा-पूर्ति से उत्पन्न तुष्टि भगवद्भक्ति के पथ में उन्नति में सहायक भी होती है। फिर भी, पूर्ण ज्ञानवान् भक्त श्रीभगवान् का परम प्रेमास्पद है, क्योंकि उसका एकमात्र प्रयोजन भगवान् की प्रेमभक्तिभावित सेवा करना है। ऐसा भक्त भगवत्-सान्निधि या भगवत्सेवा के बिना क्षणभर भी जीवित नहीं रह सकता। श्रीभगवान् को अपना भक्त अति प्रिय है; वे भी उसका वियोग सहन नहीं कर सकते। श्रीमद्भागवत (९.४.६३) में भगवद्वचन है :

अहं भक्त पराधीनो ह्यस्वतन्त्र इव द्विज।
साधुभिर्ग्रस्तहृदयो भक्तैर्भक्तजनप्रियः।।

'भक्त सदा मेरे हृदय में रहते हैं और मैं भी उनके हृदय में सदा रहता हूँ। मेरे अतिरिक्त वे और कुछ नहीं जानते और मैं भी उन्हें कभी नहीं भुला सकता। शुद्ध भक्तों और मुझ में प्रगाढ़ प्रेममय अंतरंग सम्बन्ध है। पूर्ण ज्ञानी शुद्ध-भक्त मेरी सन्निधि से कभी दूर नहीं होते। इसलिए वे मुझको अति प्रिय हैं।''

बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते।
वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः।।१९।।

बहूनाम्=अनेक; **जन्मनाम्**=जन्मों के; **अन्ते**=अन्त में; **ज्ञानवान्**=ज्ञानी; **माम्**=मेरी; **प्रपद्यते**=शरण में आता है; **वासुदेवः**=सम्पूर्ण कारणों का परम कारण; **सर्वम्**=सर्वव्यापी; **इति**=इस प्रकार (जानकर); **सः**=ऐसा; **महात्मा**=महात्मा; **सुदुर्लभः**=दुर्लभ है।

अनुवाद

बहुत जन्मान्तरों के अन्त में तत्त्वज्ञान को प्राप्त पुरुष मुझे सब कारणों का परम कारण और सर्वव्यापक जानकर मेरी शरण में आता है। ऐसा महात्मा बड़ा दुर्लभ है।।१९।।

तात्पर्य

भगवद्भक्ति करते-करते कितने ही जन्मान्तरों के अन्त में कहीं जाकर जीव को वास्तव में यह विशुद्ध ज्ञान हो सकता है कि अध्यात्म-साक्षात्कार के परमोच्च लक्ष्य